1857 की क्रान्ति

एक झलक

डॉ० शिवशंकर श्रीवास्तव

हिन्दुस्तानी एकेडेमी
१२-डी, कमला नेहरू रोड, इलाहाबाद-२११ ००१

अनुक्रम

1. सवाल, साक्ष्य और संग्राम 1857 : एक पुनर्विचार
—डॉ. वन्दिता वर्मा 15
2. 1857 की क्रान्ति का इतिहास - लेखन :
कानपुर के विशेष संदर्भ में —प्रोफ़ेसर हेरम्ब चतुर्वेदी 43
3. इलाहाबाद और 1857 —प्रोफ़ेसर योगेश्वर तिवारी 52
4. 1857 के महान विद्रोह के पूर्व गुप्त मंत्रणाएं
—प्रेमशंकर खरे 59
5. 1857 की राज्यक्रांति : सैनिक विद्रोह या जनविद्रोह
—डॉ. केशव मिश्रा 64
6. इतिहास के आइने में सन् 1857 ई. की क्रान्ति
—डॉ. सी.एल. सोनकर 70
7. 1857 का विद्रोह : एक समीक्षात्मक अध्ययन
—सुमित्रा नन्द श्रीवास्तव 84
8. ग़ालिब : 1857 और फ़िक्रे-दुनिया में सर खपाने की मजबूरियाँ
—प्रो. राजेन्द्र कुमार 94
9. राही मासूम रज़ा की शायरी में 1857
—डॉ. ताहिरा परवीन 99
10. 1857 और कालापानी —डॉ. यूसुफ़ा नफ़ीस 108
11. 1857 के विद्रोह में महिलाओं की भूमिका
—डॉ. लालिमा सिंह 126
12. 1857 का स्वतंत्रता संग्राम और दलित वीरांगनाएँ
—दीप्ति तिवारी 139
13. 1857 की जनक्रांति की प्रासंगिकता
—डॉ. रीतू जायसवाल 145

1857 और कालापानी

डॉ. यूसुफ़ा नफ़ीस

1857 के परिणामों से अंडमान निकोबार द्वीपसमूह के इतिहास का विशिष्ट अध्याय जुड़ा हुआ है। बंगाल के पूर्व की ओर कलकत्ता से लगभग 600 मील दूर 204 द्वीपसमूहों को अंडमान निकोबार के नाम से जाना जाता है।[1] पश्चिमी यूरोप में साम्राज्यवादी प्रवृत्ति के विकास के साथ अंडमान के द्वीपसमूहों की ओर ग्रेट ब्रिटेन का ध्यान आकर्षित हुआ क्योंकि अंडमान की भौगोलिक स्थिति भारत और दक्षिण पूर्व एशिया से व्यापार के लिये महत्वपूर्ण थी।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने 1788 से ही अंडमान को बसाने का प्रयत्न किया, 1788 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने रायल नेवी के आर्चिबाल्ड ब्लेयर से अंडमान द्वीपसमूह का सर्वेक्षण कराया जो 1789 में 200 भारतीयों के साथ अंडमान पहुंचा और उस बन्दरगाह को कार्नवालिस पोर्ट का नाम दिया गया। 1790 में इसे स्थायी मुख्यालय बनाने का भी विचार किया गया किन्तु 1793 में इंग्लैण्ड व फ्रांस के युद्ध के कारण आठ साल बाद 1796 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अंडमान छोड़ दिया।

भारत में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को साम्राज्य विस्तार के साथ सुरक्षित बंदरगाह की आवश्यकता थी और लार्ड डलहौजी इन क्षेत्रों को कच्चा माल मिल सकने वाली आर्थिक शक्ति के रूप में देख रहा था। 1850 से पुनः इसे औपनिवेशिक बस्ती बनाने पर विचार हुआ। यह द्वीपसमूह मुख्य भूमि से बहुत दूर समुद्र से घिरा हुआ था। यहां से भागने का मार्ग मुश्किल था, घने जंगल, ख़राब मौसम, कीड़े-मकोड़े और ख़तरनाक जंगली जनजातियों से युक्त यह द्वीपसमूह 1857 की क्रान्ति के बाद भारतीयों को दण्डित करने के लिये अंग्रेज़ों को सर्वाधिक उपयुक्त प्रतीत हुआ।[2] 1857 की क्रान्ति में भारतीयों की असफलता के बाद दिये गये दण्डों में देश निकाला ब्रिटिश नीति का अंग बना। महारानी विक्टोरिया के घोषणा पत्र के बाद उदार दण्ड के रूप में हत्या के स्थान पर देश निकाला को विकल्प के रूप में रखा गया।

सज़ा-ए-मौत के स्थान पर सज़ा-ए-कालापानी का नया रुख़ विचारधारात्मक औज़ार के रूप में अपना कर आम माफ़ी और सहनशीलता के नैतिकता के बाने के प्रदर्शन के रूप में अंडमान में भारतीय क़ैदियों को रखा गया। ब्रिटिश दण्ड विधान के अधीन जब क्रान्तिकारी बंदियों का काफी खून बहा दिया गया तो उन्हें दण्डविधान के लिये 'देश निकाला' के रूप में नयी युक्ति मिल गयी। यह नई युक्ति साम्राज्य के लिये मूल्यवान वैचारिक औज़ार थी। 'देश निकाला' दण्ड औपनिवेशिक राज्य के वैचारिक और राजनैतिक पक्ष को व्यक्त करने का अनिवार्य हिस्सा बन गया। अब तक का साम्राज्यी चेहरा खून-ख़राबा, निर्दयता और शोषण के कारण बदनाम था। देश निकाला दण्ड विधान में दया भावना दिखाई देती थी। कालापानी की सज़ा मौत की सज़ा के विकल्प के रूप में थी अतः इस विकल्प से ब्रिटिश राज्य दयाशील और वैधानिक राज्य के रूप में स्थापित हुआ।[3]

1857 की क्रान्ति के बाद ब्रिटिश सरकार का यह नया रुख़ कई उद्देश्यों से प्रेरित था-

1. ब्रिटिश सरकार की मंशा भारत से पृथक नयी औपनिवेशिक बस्ती की स्थापना की थी जहाँ से दूर-दराज़ के क्षेत्रों पर शासन स्थापित करने के लिए मुफ़्त के व्यक्ति प्राप्त किये जा सकते थे। वेस्टइंडीज़, आस्ट्रेलिया, मलक्का, अराकान और ब्रिटिश गायना की अपेक्षा अंडमान भारत से दूर नहीं था, कलकत्ता से यहाँ बड़ी आसानी से पहुंचा जा सकता था। इस कारण भी ब्रिटिश सत्ता ने अंडमान को चुना।

2. औपनिवेशिक आर्थिक शोषण की नीति को और अधिक बलवती बनाने के लिए भी ब्रिटिश सरकार ने कालापानी के विकल्प को वरीयता दी।

3. ब्रिटिश दमनकारी नीति के कारण भरे हुए भारतीय जेलों की बुरी दशा के स्थान पर नये जेल की प्राप्ति की परिकल्पना भी कालापानी की नीति का उद्देश्य था।

4. बन्दियों को भारत से बहुत दूर रखकर भारतीयों के सामूहिक अपराध पर नियंत्रण पाने की आशा थी। इसके अतिरिक्त अन्य स्थानों की अपेक्षा भारत से अधिक दूर न होने के कारण अंडमान के द्वीपों में क़ैदियों को पहुंचाने का खर्च कम होने की सम्भावना थी।

5. यह ब्रिटिश अवधारणा थी की देश से दूर रह कर अपराधी अपनी सामुदायिक और सांस्कृतिक पहचान खो देंगे और कालापानी को वह भारतीय संस्कृति पर आघात के औज़ार के रूप में आज़माना चाहते थे।

1857 के बाद इन उद्देश्यों से प्रेरित होकर भारतीयों को दण्डित करने के लिए लार्ड कैनिंग ने एक आयोग बनाया। अंडमान द्वीपसमूह में क़ैदी बस्ती बनाने के प्रस्ताव की स्वीकृति भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की अन्तिम प्रशासनिक कार्यवाही थी। 10 मार्च, 1858 को इन द्वीपों में भारतीय क़ैदियों को लाया गया जिनमें क्रान्ति में भाग लेने वाले और अन्य क़ैदी शामिल थे। 26 जनवरी, 1858 को अंडमान में (जो बन्दरगाह पोर्ट ब्लेयर के नाम से प्रसिद्ध हुआ) क़ैदी बस्ती का उद्घाटन किया गया। आगरा जेल के अधीक्षक डॉ जेम्स पेटीशन वॉकर को इसका उत्तरदायित्व सौंपा गया। Settlement के सुपिरन्डेन्ट जनरल एच. मान को "चैथम" और "रॉस" जैसे जंगल वाले द्वीपों की सफाई का कार्य सौंपा गया। खान-पान, उचित वातावरण के अभाव तथा हिसंक जन-जातियों के बीच यहाँ के क़ैदियों को कष्टों का सामना करना पड़ा। अंडमान में विभिन्न धर्मों और वर्गों के लोगों को सज़ा के तौर पर अपने जीवन के वर्ष गुज़ारने पड़े, कुछ लोगों को रिहाई मिली, लेकिन अनेकों भारतीयों का अंडमान ही मृत्यु स्थल बना। 1857 के पश्चात अनेक भारतीय सफेदपोशों को कालापानी का दण्ड मिला और यह क्रम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अन्तिम चरण तक चलता रहा।[4]

अंग्रेज़ों को कालापानी के उद्देश्यों में पूरी सफलता नहीं प्राप्त हुई क्योंकि अंडमान द्वीपसमूह में विभिन्न सूबो और क़ौमों के लोग आबाद हुए जिन्होंने अनेक बन्धनों के बावजूद भी हिन्दुस्तानी संस्कृति की विविधता में एकता की विशिष्टता को बनाये रखा और अनेक बुद्धिजीवियों ने अत्यन्त कठिनाइयों के बीच भी अपने उद्गारों को प्रकट किया जो कि 1857 के परिणामों के महत्वपूर्ण मौलिक दस्तावेज़ हैं। इन ऐतिहासिक स्रोतों को भारत के प्रथम स्वतंत्रता संघर्ष के परिणामों के लेखन में सम्मिलित करने से नये पहलू दृष्टिगत हो सकते हैं। 23 मार्च 1942 को इन द्वीपों पर जापान का अधिकार हो जाने के बाद क़ैदियों से सम्बन्धित सारे रिकार्ड नष्ट कर दिये गये। इसलिये 1857 और उसके बाद सज़ा भुगत रहे क़ैदियों का सही विवरण अधिक नहीं मिल पाता। 1857 के विद्रोह के इल्ज़ाम में मुख्य रूप से भदोही के मुसई सिंह, भीमा नायक, गरबादास पटेल, भीकाजी गणेश गोखले, वेंकट राव, सैय्यद अलाउद्दीन, हिंमाचल सिंह, कूरा सिंह, हत्ती सिंह, माया राम, जवाहर सिंह, यहया अली, महाराज ब्रज किशोर सिंह देव, मौलवी लियाक़त अली, मुफ़्ती सैय्यद अहमद बरेलवी, मुफ़्ती इनायत अहमद काकोरवी, मुफ़्ती मज़हर करीम दरियाबादी, मौलवीमुहम्मद जाफर थानेसरी, अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी आदि को अंडमान में कालापानी की सज़ा के लिए भेजा गया।[5]

इस शोध प्रपत्र में अंडमान में भेजे गए विभिन्न भारतीयों द्वारा लिखे गये अरबी, फारसी व उर्दू के ऐतिहासिक स्रोतों के विशेष सन्दर्भ में 1857 के पश्चात कालापानी में हुए कठोर अत्याचारों, शारीरिक और मानसिक यातनाओं विशेष रूप से बुद्धिजीवी वर्ग के शोषण के ऐतिहासिक सबूत के पुनर्मूल्यांकन का प्रयास किया गया है, जो कि भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के इतिहास में अंडमान के क़ैदियों के जीवन और उनकी गतिविधियों तथा तत्कालीन विरोधी परिस्थितियों के मध्य भी भारतीय संस्कृति के विशिष्ट पहलुओं के महत्वपूर्ण स्रोत हैं मुख्य रूप से निम्न ऐतिहासिक स्रोत अध्ययन के केन्द्रबिन्दु हैं- अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी द्वारा लिखित अस्सौरत-उल-हिन्दिया एवं क़सायद फ़ितनत-उल-हिन्द-अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के पिता अल्लामा फ़ज़्ले इमाम दिल्ली के सद्रउस्सुदूर थे। अल्लामा फ़ज़्ले हक़ बचपन से युवावस्था तक देहली में रहे। वह कमिश्नर देहली के दफ़्तर में पेशकार थे। इसके अतिरिक्त वह लम्बे समय तक रईस झज्जर, राजा अल्वर, नवाब टोंक और नवाब रामपुर की सेवा में भी रहे। नवाब वाज़िद अली शाह के समय में तहसीलदार हुज़ूर तहसील लखनऊ रहे।[6]

1857 की क्रान्ति में अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ने सक्रिय भाग लिया। वह अल्वर से मई 1857 में देहली पहुंचे और वहां 1857 की क्रान्ति की योजना में परामर्शदाता रहे।[7] मुन्शी जीवनलाल के रोज़नामचे से इसकी पुष्टि होती है-

16 अगस्त, 1857	अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक़ बहादुर शाह के दरबार में सम्मिलित हुए और तत्कालीन परिस्थिति के सम्बन्ध में बादशाह से बात की।
2 सितम्बर, 1857	बादशाह दरबारे आम में तशरीफ़ लाए। अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक, मीर सईद अली खाँ और हकीम अब्दुल हक़ आदाब बजा लाए।
6 सितम्बर, 1857	अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक ने इत्तेला दी कि मथुरा की फौज़ आगरा चली गयी है और अंग्रेज़ों को हटाने के बाद शहर पर हमला कर रही है।
7 सितम्बर, 1857	हकीम अब्दुल हक़, मीर सईद अली खाँ, अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक़ बद्रुद्दीन खाँ और तमाम उमरा-ओ-रूउसा शरीके दरबार थे।[8]

ऐतिहासिक स्रोतों से ज्ञात होता है कि 1857 की क्रान्ति में अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की भागीदारी रही। तारीख़-ए-ज़काउल्ला के अनुसार फ़ज़्ल-ए-हक ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध लड़ने का फ़तवा दिया जिस पर अन्य मौलवियों ने भी हस्ताक्षर किये थे।[9]

अल्लामा फ़ज़्ले हक़ जब भी बादशाह के पास जाते तो उसे परामर्श देते कि ज़ेहादी मुहिम में अपनी रियाया की हिम्मत अफ़ज़ाई करें और उनके साथ बाहर को निकलें फौज़ी दस्तों को जहां तक हो सके बेहतर मुआवज़ा दें वरना अंग्रेज़ जीत गये तो न सिर्फ़ ख़ानदाने तैमूरिया बल्कि तमाम मुसलमान नेस्तो नाबूद हो जायेंगे। (Memoirs of Hakeem Ahsanulla Khan Edited by S. Moinul Haq, Pakistan Historical Society Karachi 1958, P-24)

दिल्ली पर अंग्रेज़ों के क़ब्ज़े के बाद 5 दिन तक भूखे-प्यासे मकान के अन्दर रहे पांचवें रोज़ अपने परिवार के साथ रात में छुप कर निकले। 1859 में फ़तवा-ए-ज़ेहाद के इल्ज़ाम में आख़िर में गिरफ़्तार हुए।

तारीख़े ज़काउल्ला के अनुसार सरकारी वकील के मुकाबले में उन्होंने खुद बहस की और अनेक आरोपों को रद्द कर दिया लेकिन जो फ़तवा उन्होंने जनरल बख़्त खाँ के साथ लिखा था उस फ़तवे के बारे में आख़िर तक अड़े रहे कि वह फ़तवा सही है और उन्हीं का लिखा हुआ है। यह अदालत दो जजों की थी जिसमें जार्ज कैम्बल जूडिशियल कमिश्नर और मेजर बार्न कमिश्नर ख़ैराबाद डिवीजन थे। इन अदालतों के द्वारा उन पर मुकदमा चला और 'हब्स दवाम बउबूर दरियाए शोर (कालापानी) की सज़ा हुई। अल्लामा फ़ज़्ले हक़ अंडमान पहुंचे, जहां पर उनको क़ैदी नम्बर 3687 के रूप में रखा गया। मुफ़्ती इनायत अहमद काकोरवी, सद्र अमीं बरेली और कोल, मुफ़्ती मज़हर करीम दरियाबादी और दूसरे मुज़ाहिद उलमा वहां पहुंच चुके थे। इनकी बौद्धिक गतिविधियों से अंडमान द्वीपसमूह दारुलउलूम बन गया था। अल्लामा फ़ज्ले हक़ ने भी अनेकों कष्टों के बावजूद अंडमान निकोबार में रहने के दौरान अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी ने लिखना जारी रखा उनकी दो कृतियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं-

1. अस्सौरत-उल-हिन्दिया
2. क़सायद फ़ितनत-उल-हिन्द

अल्लामा फ़ज़्ले हक का रेसाला अस्सौरत-उल-हिन्दिया अरबी और क़सायद फ़ितनतुल हिन्द जो कि पेन्सिल और कोयले से काग़ज़ के टुकड़ों पर लिखी गये थे, मुफ़्ती इनायत अहमद काकोरवी के ज़रिये से अल्लामा फ़ज्ल-ए-हक़ के बेटे मौलाना अब्दुल हक़ के पास पहुंचे जिन्होंने इसे संकलित करके चार प्रतियां बनवाईं जिन्हें क्रमशः रामपुर, हबीबगंज, अलीगढ़ की प्रति को मौलवी अब्दुल शाहिद खाँ शेरवानी ने उर्दू अनुवाद के साथ प्रकाशित करवाया और उर्दू में इसका नाम 'बाग़ी हिन्दुस्तान' रखा। बाद में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद को मक्के वाली प्रति मिली

उन्होंने इसे 'मुकदमातुस सौरतुल हिन्दिया' का नाम दिया। अल्लामा फ़ज्ल-ए-हक लिखते हैं कि 'मेरी यह किताब एक दिल शिकस्ता नुकसान रसीदा, हसरत कशीदा मुसीबत ज़दा इन्सान की किताब है। जो इब्तेदाए उम्र से ऐश-ओ फ़राग़त की ज़िन्दगी बसर करने के बावजूद अब महबूस-ए दाम जुल्म और तबाह शुदा है वह बड़ी मुश्किलात में मुब्तेला और ज़ालिमों के हाथों गिरफ़्तार हैं इन ज़ालिमों ने उसे अच्छे लेबास से मुअर्रा करके हुज्न की वादियों और ऐसे तंगों तारीक क़ैदख़ाने में डाल दिया है जो स्याह फ़ितनो के मरकज़ हैं। वह अपनी ज़मीने शहर से जिलावतन और अहलोअयाल से दूर कर दिया गया है। अल्लामा लिखते हैं कि "मेरा जूता और लिबास उतार कर ख़राब कपड़े पहना दिये और नर्म बिस्तर छीन कर सख़्त बिछौना मेरे हवाले कर दिया गया- मेरे पास लोटा, प्याला और कोई बर्तन नहीं छोड़ा।" वह अपनी बीमारी और कमज़ोरी का विवरण देते हैं और क़ैदख़ाने की टूटी हूई छत का भी वर्णन करते हैं। जिससे वह आसमान देखा करते थे और बारिश के पानी को अन्दर गिरते हुए देखा करते थे।

अस्सौरतुल हिन्दिया से अल्लामा की राजनैतिक दूरदृष्टि का आभास मिलता है। वह पृष्ठभूमि के पश्चात् बताते हैं कि हिन्दुस्तान पर अधिकार के बाद अंग्रेज़ दो योजनाओं को कार्यान्वित करके किस प्रकार बौद्धिक और आर्थिक शोषण की नीति अपनाने का प्रयास कर रहे थे।

पहली योजना यह थी कि पिछले ज़माने के उलमाओमारिफ, मदारिसों मकातिब को मिटाने के बाद स्कूलों की यक्सा तालीम का रिवाज जिससे हर मज़हब-ओ-मिल्लत के लोग एक ही रंग में रंग जायें। उन्होंने बच्चों और नासमझों की तालीम अपनी ज़बान और मज़हब की तलक़ीन के लिए शहरों और देहातों में मदरसे क़ायम किये। पिछले ज़माने के उलमाओमारिफ़, मदारिस और मकातिब मिटाने के पूरी कोशिश की।

दूसरी योजना यह थी कि ग़ल्ले पर कन्ट्रोल करके खुदा के मख़्लूक को सर झुकाने पर मजबूर कर दिया। दूसरी तक़रीब यह सोची कि मुख़लिफ़ तबक़ात पर क़ाबू इस तरह हासिल किया जाये कि ज़मीन-ए-हिन्द से ग़ल्ले की पैदावार काश्तकारों से लेकर नक़द दाम अदा किये जायें उन ग़रीबों को ख़रीदो-फ़रोख़्त का कोई अख़्तियार न छोड़ा जाये। इस तरह भाव घटाने, बढ़ाने और मण्डियों तक अनाज पहुंचाने के खुद ही ज़िम्मेदार बन बैठे। इसका मक़सद इसके सिवा कुछ नहीं कि खुदा के मख़लूक़ मजबूर-ओ-माजूर हो कर उनके क़दमों आ पड़ें और खुराक़ न मिलने पर उनके हर हुक्म की तामील और हर मक़सद की तकमील करे।[10]

अल्लामा फ़ज्ल-ए-हक 1857 के तात्कालिक कारण को भी इंगित करते हैं- (अंग्रेज़ों ने) 'अपने मक्र की इन्तेहा इस तरह की कि सबसे पहले अपने हिन्दु-मुस्लिम लश्करियों को उनके रसूमओ उसूल से हटाने और मज़हबो-अक़ायद से गुमराह करने के दरपै हुए।' क्रान्ति की विफलता के लिए वह भारतीय क्रान्तिकारियों की कमियों से भलीभांति परिचित थे और भारतीयों की असफलता के कारणों का विश्लेषण भी उनके उद्गारों से परिलक्षित होता है। अस्सीरत-उल-हिन्दिया के विवरण इस सम्बन्ध में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं-

"हिन्दुस्तान का बरसरे पैकार और 'बाग़ी' लश्कर मुख़्तलिफ़ टोलियों में तक़सीम था। बाज़ गिरोह का कोई जनरल ही न था, बाज़ को जाय पनाह भी मयस्सर न थी बाज़ की ताक़त फ़क्रो फ़ाक़ा ने सलब करके हाथ पांव तोड़ कर बिठा दिया था, कुछ थोड़ा सा माले ग़नीमत हाथ लगाने से बेनेयाज़ हो गये थे।"

हज़ारों शहरी भी नसारा की मुहब्बत का दम भरने लगे। तमाम हिन्दू उनके साथी हो गये। मुसलमानों के दो गिरोह बन गये एक गिरोह उनका जानी दुश्मन था दूसरा गिरोह उनकी मुहब्बत में इस दर्जा गिलू रखता था कि उसके हिन्दुस्तानी लश्कर की बर्बादी उसके क़लाक़मां करने में मक्रो हीले से कोई कसर न उठा रखी थी। ....बड़ी मुसीबत आ पड़ी थी कि शहर में न कोई जाये पनाह थी न हाकिम ही रहा था क्योंकि हाकिम अपने अहलो-अयाल को लेकर शहर से तीन मील दूर मक़बरे में जा चुका था।

हकीम अहसन उल्ला ने लिखा-

"उन्होंने यह सब ग़ल्ला जो बनियों के पास था छुपा दिया और देहात और क़स्बात से उनके पास अनाज आता रहता था। वह रोक दिया। नसारा ने शहर के फाटक, शहर पनाह, क़िला, बाज़ार और दुकानों पर मुकम्मल क़ब्जा कर लिया।"[11]

अल्लामा अपने वतन से अंडमान के तकलीफ़ देह सज़ा, अंडमान में अपने और साथियों के साथ बर्ताव का विवरण दिया है। तकलीफ़ में भी अल्लाहताला का शुक्र अदा करते हुए लिखते हैं। वह अंग्रेज़ों की शोषणकारी औपनिवेशिक नीति को स्पष्ट करते हैं- "मौअल्लिफ़ सख़्त दिल, उचक्के और ज़ालिम अफ़राद.....शरीर-ओ बदफ़ितरत की क़ैद में हैं।.....और ज़ालिम-ओ जाबिर, बदखुल्क़ और बदकिरदार के मज़ालिम से हैरान परेशान हैं।.....वह स्याह रू स्याह दिल मलून मिज़ाज तुर्शरू, कंजी आँख, गन्दुम गूँ, बाल बालों की क़ैद में आ चुका है।"

"ये सारा जुल्म-ओ-सितम बदकेश ने रवा रखा है। इससे उन ज़ालिमों का मक़सद निशान-ए-दर्स को मिटाना और इल्म के झण्डे को नीचे गिराना है।"

साम्राज्ञी विक्टोरिया के बारे में लिखते हैं- "इन तमाम फ़तहमन्दियों के बाद भी मलक-ए-नसारा (विक्टोरिया) मक्र से बाज़ न रहीं, उसके मक्र की वजह से उन्हें बड़ी ताक़त-ओ-क़ूवत हासिल हो गयी।" "मुझे एक औरत (विक्टोरिया) के मक्र ने मुबतेला-ए-मुसीबत कर दिया। क़सीदे में लिखते हैं- कि बहुत से सफ़ेद रंग, शराब ख़ार और मैं गूँ मूछों वाले दुश्मन मुझ पर बेराद करते हैं।" वह स्याह जिगर सफेदफ़ाम, नरम जिल्द और सख़्त क़ल्ब वाले हुए हैं, वोह बदबख़्तों बेशर्म हैं, उन्हें न नंगो-आर है, न ग़ैरतओ हया उनके पास से हो कर रही गुजरी है।[12]

अल्लामा फ़ज़्ले-ए-हक़ ने पूर्वी ज्ञान से परिचित Col. Houghton की एस्ट्रोनामी की किताब का शुद्धिकरण भी किया। सुपरिटेन्डेंट की पेशी में एक सज़ायाफ़्ता मौलवी भी थे। सुपरिटेन्डेंट ने फ़ने-हैय्यत (एस्ट्रोनामी) पर अपनी एक फारसी किताब उनको दी कि इसकी इबारत सही और दुरुस्त कर दें मौलवी साहब से तो काम चला नहीं, हां अल्लामा नये-नये गये थे। एक साल ही गुज़रा था, उनकी ख़िदमत में वह किताब पेश करके सही करने की गुज़ारिश की। अल्लामा ने न सिर्फ़ इबारत की बल्कि मुबाहिसे में भी कुछ इज़ाफ़ा करके हाशिये पर बहुत सी कुतुब के हवाले लिख दिये। जब ये किताब मौलवी साहब सुपिरटेंडेन्ट के पास ले गये तो वह देखकर हैरान रह गया और कहने लगा मौलवी साहब तुम बड़ा लाएक़ आदमी हो, मगर जिन किताबों के हवाले हैं और उनकी जो इबारतें नक़ल की हैं यहाँ नहीं हैं, मौलवी साहब मुस्कराये और असल वाक़्या अल्लामा साहब का कह सुनाया वह उसी वक़्त मौलवी साहब को लेकर बैरक में आया, अल्लामा मौजूद न थे कुछ देर इन्तेज़ार के बाद देखा कि टोकरा बग़ल में दबाए चल आ रहे हैं। वह यह हैयत देखकर आँखें में आँसू भर लाया माज़रत के बाद उसने उन्हें क्लर्की में ले लिया।[13]

अल्लामा फ़ज़्ले-ए-हक़ को भारत में उनके सहयोगी याद करते थे मिर्ज़ा ग़ालिब से अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के सम्बन्ध बहुत अच्छे थे। मिर्ज़ा ग़ालिब के पत्रों से उनके मित्र से दूरी की बेचैनी स्पष्ट होती है उन्होंने यूसुफ मिर्ज़ा को लिखा- "अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक़ का कुछ हाल तुम्हें मालूम हुआ। कुछ मुझसे तुम मालूम करो। हुक्म दवाम हब्स बहाल रहा बल्कि ताकीद हुई कि जल्द दरियाए शोर की तरफ़ रवाना करो। चुनांचे तुमको मालूम हो जायेगा, उनका बेटा विलायत में अपील किया चाहता है। क्या होता है? जो होना था वोह हो चुका।" मियांदाद खाँ कलकत्ता पहुंचे तो मिर्ज़ा ग़ालिब ने उन्हें लिखा- हाँ खाँ साहब! आप जो कलकत्ता पहुंचे हों और सब साहबों से मिले हों तो अल्लामा फ़ज्ल-ए-हक़ का हाल अच्छी तरह दरयाफ़्त करके मुझको लिखें कि उसने रिहाई क्यों न पाई। वहाँ ज़ज़ीरे में उनका क्या हाल है? गुज़ारा किस तरह होता है?[14]

अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की अंडमान में 20 अगस्त, 1861 को मृत्यु हुई जबकि उनके बेटे ने बहुत प्रयासों के बाद ब्रिटिश सरकार से अपने पिता को वापस लाने की अनुमति प्राप्त कर ली वह उनको लेने अंडमान पहुंचे लेकिन उसी रात अल्लामा फ़ज़्ले हक की मृत्यु हो चुकी थी।[15] अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ने अंडमान में रहकर 1857 की क्रान्ति तथा कालापानी के कष्टों से सम्बन्धित आँखों देखी स्थिति का जो सजीव विवरण दिया है वह 1857 का इतिहास लिखते समय प्राथमिक स्रोत के रूप में लिये जाने की आवश्यकता है।

मौलवी मुहम्मद जाफ़र थानेसरी द्वारा लिखित तर्जुमा आईन-ए-पोर्ट ब्लेयर, तरीख-ए-पोर्ट ब्लेयर- तारीख़े अजीब-

WW. Hunter के अनुसार मौलवी मोहम्मद जाफ़र थानेसरी वहाबी साज़िशों में सम्मिलित थे अंग्रेज़ों के विरुद्ध सैनिक और शस्त्र लाने का कार्य करते थे। 1850 तक जाफ़र थानेसरी वहाबी तहरीक में सक्रिय थे। 1857 के विद्रोह में उन्होंने भाग लिया और जब देहली में क्रान्तिकारी असफल होने लगे तो मौलवी जाफ़र थानेसर वापस आ गये और गुप्त रूप से पत्र व्यवहार करने लगे। 1863 ई में उनके घर की तलाशी हुई किन्तु वे छिप गये, इसलिये ब्रिटिश सरकार ने उनकी गिरफ़्तारी के लिये 10 हजार रुपये का इनाम घोषित किया। वह अलीगढ़ से बन्दी बना कर अम्बाला लाये गये और उन पर मुक़दमा चला। मई 1864 को मुक़दमे का फैसला हुआ, पहले फांसी की सज़ा दी गयी लेकिन बाद में उसे कालापानी में बदल दिया गया।[16] 11 जनवरी 1860 में वह अंडमान पहुंचे। जब मौलवी मुहम्मद जाफ़र वहां गए तो उन्हें कमिश्नर के दफ़्तर में नायब मीर मुंशी के रूप में नियुक्ति मिली। मौलवी मुहम्मद जाफ़र को तनख़्वाह के अलावा घर भी मिला और वहां उन्होंने विवाह भी किया। वह प्रिसटौरस, रॉस और एबरडीन आदि में रहे (Selection from Bangal Government Records on Wahabi Trials pp 240-260) । पोर्ट ब्लेयर में उन्होंने अंग्रेज़ी भी सीखी अंडमान में उनके बराबर अंग्रेज़ी का ज्ञान किसी मुसलमान को नहीं था वह तारीख़े अज़ीब में लिखते हैं- "जो अंग्रेज़ी नहीं जानता वह बिलाशुबह दुनिया के हालात से बाखूबी माहिर नहीं हो सकता। कोई भी अंग्रेज़ी सीखे बिना पक्का दुनियादार और तर्रार नहीं हो सकता और न सिवाए इस ज़बान के आजकल कोई आला ज़र कमाने का है।"[17] मौलवी मुहम्मर जाफ़र थानेसरी बुद्धिजीवी थे उन्होंने अनेक रचनायें की लेकिन उनमें तर्जुमा आईने पोर्ट ब्लेयर, तारीख़ पोर्ट ब्लेयर और तारीख़े अजीब (कालापानी) प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के महत्वपूर्ण दस्तावेज़ है-

1. तर्जुमा आईन-ए-पोर्ट ब्लेयर - मौलवी मुहम्मद जाफ़र ने अण्डमान द्वीपसमूह और पोर्टब्लेयर के डिप्टी कमिश्नर मेजर प्राथरो को पोर्ट ब्लेयर कानून से सम्बन्धित किताब तैयार करने में मदद की। विशेष रूप से नक्शे और रिपोर्टों को बनवाने में सक्रिय रहे, आईने पोर्ट ब्लेयर का अनुवाद भी किया।

2. तरीख-ए-पोर्ट ब्लेयर- 228 पृष्ठों की यह किताब 1879 में लिखी गयी इसके दो भाग है-

1. प्रथम भाग में अण्डमान द्वीप समूह और पोर्ट ब्लेयर की दशा और घटनायें लिखी हैं।

2. दूसरे भाग में अण्डमान द्वीपसमूह में 32 प्रसिद्ध भाषाओं की दैनिक आवश्यकताओं के छोटे-छोटे वाक्य लिखे गये है।[18]

इस किताब के लिखने के उद्देश्य के विषय में जाफ़र थानेसरी कहते हैं- कि "मुद्दत दराज़ से बहुत से साहब मुझसे ज़बान उर्दू नागरी और फ़ारसी सीखते थे ये फ़रमाइश थी कि उर्दू मुरव्वजा पोर्ट ब्लेयर में कोई ऐसी किताब लिखी जाये कि जिससे यहां के लोगों को उर्दू सीखने में मदद मिले और इसके सिवाए और बहुत से लोगों की मुद्दत से ये तमन्ना थी कि एक किताब तारीख़े पोर्ट ब्लेयर जिसमें यहां की आबादी औज़ा-ओ-अतवार बन्दोबस्त-ओ-क़ानून-ओ-ज़बान मुख़्तलिफ़ पोर्ट ब्लेयर हाल जंगलियां जज़ाएर का मुख़्तलिफ़ दर्ज हो तसनीफ़ करके ग़ैर ज़ानिबदार हिन्द के लोगों को भी यहां के अज़ाएबात से आगाह किया जाये सिवा इन दोनों ग़र्ज़ों से रफ़ा हो जाने के वास्ते इस ख़ाकसार मुहम्मद जाफ़र मीर मुन्शी सर्दन डिस्ट्रिक्ट ने यह मुख़्तसर किताब तहरीर करके इसका तारीख़ी नाम तारीख़-ए-अजीब रख दिया।"[19]

वह पोर्ट ब्लयेर में मिली-जुली संस्कृति तथा हिन्दुस्तानी (उर्दू) की महत्ता को स्पष्ट करते हैं- "ग़दर 1857 की बदौलत बीसियों राजे-महाराज़े, नवाब, जमींदार, मौलवी, मुफ़्ती, क़ाज़ी, डिप्टी कलेक्टर, मुन्सिफ़ सद्र अमीन, सद्र उस्सुदूर रिसालादार, सूबेदार, जमींदार वगैरह-वगैरह यहां क़ैद हैं।"

पोर्ट ब्लेयर एक ऐसी जगह है जिसमें चीन, बर्मा, मलाई, संगली, खीगली, निकोबारी, कश्मीरी, पश्तूनी, ईरानी, मकरानी, अरबी, हब्शी, पारसी, पुर्तगाली, अमरीकन, अंग्रेज़, डेन, फ्रेन्च वगैरह और हिन्दुस्तान के सब ज़िलों और शहरों के आदमी मिस्ल भूटिया, नेपाली, सिन्धी, पंजाबी, गुजराती, अहले ब्रज, आसामी, मैथिली, बुन्देलखण्डी, उड़िया, तलंगी, मरहठे, कर्नाटकी, मद्रासी, मलयालम, गौड़, भील, बंगाली, कोल, संथाल वगैरह सब मौजूद हैं। जब ये लोग आपस में मिल कर बैठते हैं तो अपनी ज़बान में बातचीत करते हैं मगर बाज़ार और कचेहरियों की ज़बान हिन्दुस्तानी है,

इस वास्ते हर आदमी को ख़्वाह वह किसी मुल्क का हो, यहां आकर उसे हिन्दुस्तानी ज़बान सीखना ज़रूर पड़ती है। बल्कि बग़ैर सीखे थोड़े रोज़ बाद हर आदमी खुद-ब-खुद हिन्दुस्तानी बोलने लगता है। क्योंकि जब तक कोई आदमी हिन्दुस्तानी न बोले उसका गुज़ारा नहीं हो सकता। मेरे ख़्याल में परदए जमीं पर कोई दूसरी जगह इस बात में पोर्ट ब्लेयर के मुक़ाबिल नहीं होगी। यहां एक ऐसा मेला जमा हुआ है कि परदए ज़मीं पर ऐसा मज्मए मुख़ालिफ़ न जमा हुआ होगा।[20]

मौलवी मुहम्मद जाफ़र ने तारीख़-ए-पोर्ट ब्लेयर सरदार बघेल सिंह, पोर्ट ब्लेयर के डिस्ट्रिक्ट सुपरिंटेंडेंट और उनके बेटे ठाकुरसिंह की फ़रमाइश पर लिखी थी। पहली बार यह 1880 में नवलकिशोर प्रेस लखनऊ से छपी 1892 में दूसरा संस्करण छपा। इसमें छह अध्याय हैं-

1. पहले अध्याय में जज़ाएर अण्डमान और पोर्ट ब्लेयर की स्थिति, आबादी, भौगोलिक दशा, स्थानीय निवासियों आदि का विवरण है।

2. दूसरा अध्याय प्रशासनिक प्रबन्धों के वर्णन से सम्बन्धित है। अण्डमान द्वीप पर अंग्रेज़ों के अधिकार करने में इस समय तक सात सुपरिटेण्डेन्ट नियुक्त हो चुके थे। उन अधिकारियों के काल की विशिष्ट घटनाओं उनके प्रशासन व कानूनी कार्यवाहियों का विवरण है।

3. तीसरे अध्याय में गवर्नर जनरल लार्ड मेयो की हत्या की आँखों घटनाओं का विशद विवरण दिया है।

4. चौथे अध्याय में उस समय प्रचलित दस्तूर-उल-अमल और उनके क़ानूनों का वर्णन है।

5. पांचवें अध्याय में अण्डमान और पोर्ट ब्लेयर की प्रचलित भाषाओं और वहां के स्थानीय निवासियों की सभ्यता व संस्कृति का विवरण है।

6. छठा अध्याय संक्षिप्त है जिसमें कुछ क़ैदियों के अज़ीबो-ग़रीब नाम दिये गये हैं।[21]

तरीखे-अज़ीब कालापानी- यह किताब तारीख़-ए-पोर्ट ब्लेयर का दूसरा भाग है जब 1884 में मौलवी मुहम्मद जाफ़र अंडमान से वापस आये तो सभी सम्बन्धियों और मित्रों ने उनसे लम्बे बन्दी जीवन के अनुभव पूछे। इसके प्रत्युत्तर में मौलवी मुहम्मद जाफ़र थानेसरी ने इस पुस्तिका में अपनी गिरफ़्तारी, मुक़दमे, अंडमान की यात्रा, बन्दी जीवन और रेहाई घटनाओं को अत्यन्त रोचक ढंग से प्रस्तुत किया क्योंकि उनका उद्देश्य अपने सहयोगियों को बन्दी जीवन के बीते हुए वर्षों से अवगत कराना था। इस पुस्तक का पहला संस्करण शेख मुहम्मदी द्वारा अम्बाला से प्रकाशित

हुआ इसके बाद सूफ़ी कम्पनी पिंडी बहाउद्दीन ने कई संस्करण प्रकाशित किये। 1962 में सलमान एकेडमी, कराची से भी प्रकाशित हुई इसके अंग्रेज़ी अनुवाद भी किये गये।[22] Allen के अनुसार 'In 1884 a remarkable autobiography was published in Delhi. It was entitled Kalapani- Tarikh-e-Ajaeb (The Black Water : A Strange Story) and was first printed memoir by an Indian Wahabi, telling of his arrest, trial and transportation to Andman Islands where he spent 16 years in exile."[23] S. Sen कालापानी के ऐतिहासिक महत्व के सम्बन्ध में लिखतें हैं- Scholarship on the first fifty years of the Andman Islands Penal colony is marked by an acute paucity of first hand narratives by the convicts themselves- ----------a rare Indian convict's autography from the Andmans in the 19th century is an Urdu narrative by Maulana Mohd. Jafar Thanesari. A Wahabi arrested in 1863 for conspiracy to smuggle funds to anti British Mujahidin in Afghanistan.

It consists of- an understanding of the nature of the Penal Colony, the nature of the penal experience and the nature of a convict's self representation.[24] मौलवी मुहम्मद जाफ़र को 1883 ई. में रिहाई हुई और 1905 में उनकी मृत्यु हो गयी। अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक़ ख़ैराबादी और मौलवी मोहम्मद जाफ़र थानेसरी की किताबों के अतिरिक्त अन्य बुद्धिजीवियों ने भी अंडमान में अपनी प्रतिक्रियायें पद्य में व्यक्त कीं। 1857 की क्रान्ति के पश्चात मुफ़्ती सैय्यद अहमद बरेलवी को 1857 की क्रान्ति के पश्चात् कालापानी की सज़ा मिली थी उन्होंने भी अंडमान के कष्टों की प्रतिक्रिया में एक मन्ज़ूम अर्ज़दाश्त बहुज़ूर रेसालत माब सल्लेअल्लाह अलैह वसल्लम' लिखी जिसके कुछ बन्द इस प्रकार हैं-

क़सम तुझे ऐ नसीम-ए-सहर मेरी बेकसी पर ज़रा रहम कर
मयस्सर नहीं कोई पैग़ाम्बर मदीने में होवे जो तेरा गुज़र
तो मेरी तरफ से ज़मीं चूमकर ये कहना बदरगाहे खैरुलबशर
नबी उल्वरा या नबीउल्वरा
मुबीं हाले मा या नबी उल्वरा
बंधे-बन्द-ए आहन से सब दस्तो पा रहा बन्द यक चन्द आबो
ग़ेज़ान सुनता था जो कुछ वो सब कुछ सुना न होना था जो कुछ वा सब कुछ हुआ
लुटा घर, दयारे वतन भी छुटा छुटे सब के सब दोस्त और आश्ना
नबी उल्वरा या नबीउल्वरा
मुबीं हाले मा या नबी उल्वरा

जहाँ पर अयां हुस्ने एख़्लाक़ है सनागर तेरा आप ख़ल्लाक़ है
तेरे नाम से रौशन आफ़ाक़ है तेरी ज़ात एहसान में ताक़ है
असीरी बहुत इसपे अब शाक़ है ये सैय्यद रेहाई का मुश्ताक़ है

नबी उल्वरा या नबीउल्वरा
मुर्बी हाले मा या नबी उल्वरा"

इसके अतिरिक्त मुफ़्ती इनायत अहमद काकोरवी ने भी बन्दी जीवन में किताबें लिखीं जिन्होंने 1857 में अंग्रेज़ों के विरुद्ध फ़तवा दिया। इसकी सज़ा उन्हें कालापानी के रूप में मिली। उन्होंने वहां इल्मउस्सीग़ा तवारीख़े हबीबउल्ला, (जो उर्दू ज़बान में मुहम्मद साहब की सीरत की पहली किताब है) लिखीं एवं एक अंग्रेज़ की फर्माइश पर तक़वीम उलबल्दान को दो साल में उर्दू तर्जुमा किया इसी के आधार पर उनको मुक्त कर दिया गया। अंडमान से वापस आकर वे कानपुर में रहे। लिखीं-

मुफ़्ती मज़हर करीम दरियावादी ने 1857 में शाहजहाँ से क्रान्ति में भाग लिया, क्रान्ति की असफलता के बाद बन्दी बना कर अण्डमान लाये गये उन्होंने 1866 में मेजर जॉन हाटन की फरमाइश पर भूगोल की प्रसिद्ध पुस्तक 'मरासद-उल-इत्तेला' का उर्दू में अनुवाद किया। क़ाज़ी सरफ़राज़ अली, ने भी तारीख़ जज़ाएर अंडमान लिखी -

1857 की क्रान्ति के बाद जब अंग्रेज़ों का मुरादाबाद पर अधिकार हुआ तब वहां से मौलवी अय्यूब ख़ाँ कैफ़ी को अंडमान भेजा गया। मौलवी अय्यूब ख़ाँ कैफ़ी ने अंडमान में बीस अशार का एक कता-ए-तारीख़ मेयो लिखा। अंडमान में वायसराय लार्ड मेयो की शेर अली अफ़रीदी के द्वारा हत्या की गयी उसकी प्रतिक्रिया में लिखे अशार उस महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना का प्राथमिक स्रोत हो सकते हैं-

उम्दए लन्दन गवर्नर जनरल हिन्दोस्तां
क़ैदियों की परवरिश को लाये तशरीफ़ अंडमां
पंजशम्बा फरवरी की आठवीं तारीख़ थी
रोज़े महशर से वोह शब पैदा हुई थी तो अमां
आफ़रीदी शेर अली ने छुरी से बिस्मिल किया
नील का टीका लगाया क़ैदियों पर जावेदां

....

बस कर ऐ कैफी क़लम को थाम क़िस्सा है दराज़
फ़िक्र कर तारीख़ की लेकिन बयां हो तो अमां

फर्क है बाक़ी जब निकाला चर्ख ने तो बोल उठा

जान ज़ालिम से छुटी मज़लूम से छूटा जहां[6]

मुहम्मद इस्माइल मुनीर शिकोहाबादी उर्दू के प्रसिद्ध शायर थे जो नवाबों के यहां कार्यरत थे यद्यपि वे 1857 के विद्रोह के आरोप में वह अण्डमान नहीं गये वह व्यक्तिगत कारणों से दण्डित करके भेजे गये। उन्होंने भी अंडमान के सम्बन्ध में शेर कहे। जो उस समय के कालापानी के क़ैदियों की मनःस्थिति को स्पष्ट करते हैं-

मरता हूं मसाएब की फ़रावानी से

सदमें हैं रन्ज जिस्मी-व जानी से

अफ़सोस है इस मरीज़ की हालत पर

जो दर रहे तबीब रूहानी से

मुनीर शिकोहाबादी ने 22 रूबाइयां दरियाए शोर के कष्टों पर लिखीं। एक रुबाई में कहते हैं-

गुरबत में वतन ख़ानाबदोशों को मिला

ज़हर-ए-गुरबत शुक्रफ़रोशों को मिला

जब लख़्तेजिगर खाने लगे प्यास में भी

कालापानी सफेद पोशों को मिला।[7]

मुनीर शिकोहाबादी के एक क़ता-ए-तारीख़ से ज्ञात होता है कि उनके एक मित्र खुशीराम ने 1861 में अंडमान की तारीख़ लिखी-

तसनीफ़ की जनाब ख़ुशीराम ने यहां

जानेख़िर्द किताब, किताब है तारीख़-ए-अंडमां

रूदाद है जज़ाएरे दरियाये शोर की

मतबू शेख़-ओ शाब है तारीख़-ए-अंडमां

मौजूं किये मुनीर ने यू साल ईस्वी

यक्ता व लाजवाब है तारीख़-ए-अंडमां[8]

इन स्रोतों के आधार पर यह निष्कर्ष सामने आता है कि 1857 के पश्चात् अंडमान भेजे गये बन्दियों के इतिहास के लेखन के समय अंग्रेज़ी स्रोतों के साथ ही भारतीय ऐतिहासिक स्रोतों को भी प्रकाश में लाने की आवश्यकता है। विशेष रूप से उर्दू, फ़ारसी व अरबी के बिखरे हुए स्रोतों के संकलन एवं विश्लेषण से 1857 की क्रान्ति एवं कालापानी से सम्बन्धित पहलू उजागर किये जा सकते हैं।

सन्दर्भ-सूची

1. विशद विवरण हेतु देखें- Mouat, Frederic John Adventures and Researchs among the Andaman Islands, London, Hirst Blacken, 1863. Rai, S Andamana & Nicobar Islands Past & Present, Anamika Prakashan, New Delhi, 2001. Subhan, Abdul, Geography Islands of Andaman & Nicobar, Govt. High school, Port Blair, 1938. Singh, K.S. (editor) Andaman and Nicobar Islands People of India Series, Vol. III, Anthropoligal Survey of India, 1994. Majumdar, R.C. History of Andaman & Nicobar Islands 1756-1947, Sterling Publishers, 1968. Kulkarni, Narayan Andaman & 1857, Mukti Teerth, Calcutta, 1982. Mathur, L.P. Kalapani: History of Andaman & Nicobar Islands with a study of Indian Freedom Struggle, New Delhi, eastern Book Company, 1992, Sterling Publishers, 1968. Vaidik, Aparna Imperial Andaman: Colonial Encountered Island History, Cambridge Imperial Post-Colonial studies, Palgrame Macmillan, 2010.
2. विशद विवरण हेतु देखें- Vaidik, Aparna Sazaa-e-Kala Pani: Banished Rebels of 1857, Rethinking 1857, Ed. Sabyasachi Bhatt, Orient Longman, 2010. N. Iqbal Singh The Andaman story, Vikas, New Delhi, 1978. Majumdar, R.C. Penal Settlement in Andaman, New Delhi, Gazetteers Unit, Department of Culture, Ministry of Education and Social Welfare. Iqbal, Rashida, Unsung Heroes of Freedom Struggle in Andamans, Who's Who, Foresight Publications & distributors, New Delhi, 2004.
3. एन. राजेन्द्र- अंडमान में बाग़ी क़ैदी (लेख) सं. सिंह, मुरली मनोहर प्रसाद एवं अवस्थी रेखा- 1857 : बग़ावत के दौर का इतिहास, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2009, P.310
4. Arnold David The Contested Prison: India 1790-1945, Frank Dikotter and Ian Brown (ed.) In Frank Dikotter and Ian

Brown (eds) Cultures of Confinement : A History of the Prison in Global Perspective, London Hurst, 2007.

5. Ahmad, M. Mujtaba The Silent Past of Andaman The Few Freedom Fighters of 1857, 2004. Aggarwal, S.N. The Heroes of Cellular Jail, Rupa Publications, New Delhi, 2002 Archive 8- Andaman Sheekha, The True Mirror of A&N Island. www. andaman sheekha.comèarchive 43.html www.rttd.nic.inèmassmedia 2009.pdf नीलकण्ठ, कालापानी अंडमान का इतिहास, साक्षी प्रकाशन, नई दिल्ली

6. मिस्बाही, यासीन अख़्तर, क़ायदे जंग आज़ादी अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक ख़ैराबादी, इन्क़लाब 1857 दारुलक़लम, नई दिल्ली- 2007 इसके अतिरिक्त अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक और 1857 निज़ामी ख़लीक़ अहमद, 1857 का तारीख़ी रोज़नामचा नदवतुल मुसन्नफ़ीन पृ. 96-97, 142-143

7. Aderson, Clare- The Indian Upbringing of 1857-58: Prisons, Prisoners and Rebellions, Anthom, South Asian Studies Series, Anthon Press, 2007, p. xi-205, P- 127-176 Malik Jamal, Letters, Prison Sketches and Autobiographical Literature: The case of Fazl-e-Haq Khairabadi in the Andaman Penal Colony. The Indian Economic and Social History Review, March 2006, Vol. 43, p. 77-100. Dutt, Amresh The Encyclopaedia of Indian Literature, Vol. I, Sahitya Akademy, Delhi.Hasan Mehdi, Bahadur Shah and War of 1857 In Delhi, New Delhi P-372-377.

8. मियां सैय्यद मोहम्मद उलेमाए हिन्द का शानदार माज़ी खण्ड-4 अलजमीयत बुक डिपो, देहली पृ. 494 निज़ामी, ख़लीक़ अहमद, ग़दर का तारीख़ी रोज़नामचा, पृ. 214

9. शेरवानी, अब्दुल शाहिद, बाग़ी हिन्दोस्तान, अल्लामा फ़ज़्ले हक़- अस्सौरतुल हिन्दिया का उर्दू अनुवाद, अल मजमउल इस्लामी, मुबारक पुर, आज़मगढ़ Rizvi S.A.A. Freedom Struggle in U.P. : Source Material Vol. 1 Publication Bureau Information Department, U.P. Lucknow. P-453-458

10. मिस्बाही, यासीन अख़्तर, क़ायदे जंग आज़ादी अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक़ ख़ैराबादी, इन्कलाब 1857 दारुलक़लम, नई दिल्ली- 2007 पृ 186-188
11. पूर्ववत्, पृ. 192-194
12. कादरी मोहम्मद अय्यूब, जंगे आज़ादी 1857 वाक़्यातो शख़्सियात, पाक एकेडमी, कराची, मारिफ़ प्रेस, लाहौर, 1976, पृ. 442
13. शेरवानी, अब्दुल शाहिद, बाग़ी हिन्दोस्तान, अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की अस्सौरतुल हिन्दिया का उर्दू अनुवाद, अल मजमउल इस्लामी, मुबारक पुर, आज़मगढ़ पृ. 175-176
14. Russell, Ralph and Islam, Khursheedul Ghalib 1797-1869 Life and Letters. Oxford University Press 1994 P- 263-64
15. मिस्बाही, यासीन अख़्तर, क़ायदे जंग आज़ादी अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक ख़ैराबादी, इन्कलाब 1857 दारुलक़लम, नई दिल्ली- 2007 इसके अतिरिक्त अल्लामा फ़ज़्ल-ए-हक और 1857 निज़ामी ख़लीक़ अहमद, 1857 का तारीख़ी रोज़नामचा नदवतुल मुसन्नफ़ीन दिल्ली
16. शेरवानी, अब्दुल शाहिद, बाग़ी हिन्दोस्तान, अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की अस्सौरतुल हिन्दिया का उर्दू अनुवाद, अल मजमउल इस्लामी, मुबारक पुर, आज़मगढ़ पृ. 156, S. Moinul Haq, The Story of the War of Independence, Risalah on the war in Journal of Pakistan Historical Societyvèl 1957 pp 26-57
17. तवारीखे अजीब पृ. 176 कादरी मोहम्मद अय्यूब, जंगे आज़ादी 1857 वाक़्यातो शख़्सियात, पाक एकेडमी, कराची, मारिफ़ प्रेस, लाहौर, 1976, पृ. 72
18. पूर्ववत्, पृ. 85
19. थानेसरी मोहम्मद जाफ़र, तारीख़े अजीब पृ. 403
20. थानेसरी मोहम्मद जाफ़र तारीख़े अजीब कालापानी सं. मोहम्मद अय्यूब क़ादरी सलमान एकेडमी, कराची 1960, पृ. 201
21. कादरी मोहम्मद अय्यूब, जंगे आज़ादी 1857 वाक़्यातो शख़्सियात, पाक एकेडमी, कराची, मारिफ़ प्रेस, लाहौर, 1976, पृ.न. 451
22. पूर्ववत्, पृ. 85-86
23. The Annual of Urdu Studies No. 26, 2006 p-185 Dutt, Amresh The Encyclopaedia of Indian Literature, Vol. I, Sahitya Akademy, Delhi.

24. Sen, Satadru Discipline Punishement : Colonialism and Convict Society in Andaman Islands, Oxford University Press, 2006. Sen, Satadru Context, Representation and the Colonized Convict: Maulana Thanesari in the AndamanIsland, Crime, History and Societies, 8,2 (2004), 117-139.
25. कादरी मोहम्मद अय्यूब, जंगे आज़ादी 1857 वाक़्यातो शख़्सियात, पाक एकेडमी, कराची, मारिफ़ प्रेस, लाहौर, 1976, पृ नं 451
26. पूर्ववत्, पृ. 452
27. पूर्ववत्, पृ. 457, 58
28. पूर्ववत्, पृ. 458

•••